बाल विकास संबंधी अध्ययनों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

रंजना कुमारी झा

बाल–विकास सम्बन्धी मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण के कई पहलू हैं। मध्ययुग में बालक को वयस्क का छोटा रूप माना जाता था। मध्ययुगीन समाज के विश्लेषण से मालूम होता है कि इस काल में ज्यों ही बालक माता की निरन्तर सहायता के बिना जीवित रहना सीख लेता था, उसे वयस्कों की श्रेणी में मान लिया जाता था। इसका यह तात्पर्य नहीं कि बालक की उपेक्षा की जाती थी। वरन् बालक एवं वयस्क के पालन–पोषण में उत्तरदायित्व में कोई विशेष अन्तर नहीं समझा जाता था।

17वीं, 18वीं सदी में बालकों की ओर मनोवैज्ञानिक रूप से ध्यान देना प्रारम्भ हुआ। बाल्यावस्था को वयस्कावस्था से भिन्न एक विशेष अवस्था समझा गया। उनकी मनोवैज्ञानिक, शैक्षणिक तथा शारीरिक आवश्यकताओं की ओर विशेष ध्यान देना आरम्भ किया गया। इसी काल में यह मान्यता विकसित हुई कि बालक के व्यवहार में सुधार करने के लिए उसे समझना आवश्यक है। दार्शनिकों ने बाल्यावस्था को समझने का प्रयास किया। चार्ल्स डार्विन के विकास के सद्धान्तों के साथ ही 19वीं सदी में बालक के सम्बन्ध में भी वैज्ञानिक अध्ययनों का महत्व समझ में आया। वास्तव में जी0 स्टेनले हॉल को सिद्धान्तों का अध्ययन का प्रणेता कहा जा सकता है।